Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 7.671
January to March 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLV

राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय राजनयिक संबंधों में कौटिल्य के षाड्गुण्य नीति की उपयोगिता- एक अध्ययन

डॉ. शोभाराम सोलंकी*

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, कसरावद, जिला खरगोन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – कौटिल्य की षाड्गुण्य नीति राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा में महत्त्वपूर्ण नियमों की स्थापना करती है। इसने समाज के सामूहिक उत्थान, राजनीतिक स्थिरता, और आर्थिक समृद्धि को महत्तव दिया है। नीति में सुरक्षा को संरक्षित करने के लिए शक्तिशाली संरचनाएं और संघर्ष के नियमों का वर्णन किया गया है। यह राष्ट्रीय सुरक्षा को सुनिश्चित करने के साथ ही अंतरराष्ट्रीय समझौतों में भी सुरक्षा की महत्ता को बताती है। नीति ने सामरिक सुरक्षा को भी उच्च प्राथमिकता दी है। इन सिद्धांतों का पालन करके सुरक्षा के विभिन्न पहलुओं को समझाने और समाधान करने में मदद की जा सकती है, जो राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सुरक्षा की प्रतिबद्धता के रूप में काम करते हैं।आचार्य कौटिल्य केद्वारा प्रतिपादित संधि, विग्रह, यान, आसन, संश्रय, द्वैधीभाव आदि नीति वर्तमान में अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के क्रियांवयन में प्रासंगिक है। प्रस्तुत शोध पत्र में आचार्य कौटिल्य के षाड्गुण्य नीति पर प्रकाश डालने का विनम्र प्रयास किया गया है।

शब्द कुंजी– अर्थशास्त्र, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति, षाड्गुण्य नीति, संधि, विग्रह, यान, आसन, संश्रय, द्वैधीभाव।

प्रस्तावना – एतिहासिक स्रोतों से ज्ञात होता है कि आज से लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व तत्कालीन तक्षशिला विश्वविद्यालय के आचार्य कौटिल्य द्वारा क्रियांवित उत्तम राजव्यस्था, प्रशासनिक कार्यकुशलता एवं सुदृढ़ सैन्य विधान परवर्ती युगों के लिए प्रेरणा स्रोत बनी। किसी भी राज्य की एकता, अखंडता, स्वतंत्रता एवं सम्प्रभुता के स्थायित्व के लिए दूरदर्शी व स्पष्ट नीतियों का निर्धारण अति आवश्यक है जिसके सफल क्रियान्वयन पर ही सम्बंधित राज्य का अस्तित्व टिका रहता है। कौटिल्य की षाड्गुण्य नीति एक प्राचीन नीतिशास्त्र है जो उसके अर्थशास्त्र में विस्तार से वर्णित है। यह नीति राजनीति, आर्थिक, सामाजिक और राष्ट्रीय सुरक्षा के क्षेत्र में सुरक्षा और स्थिरता को प्राप्त करने के लिए अनुशासन और नीतियों की महत्ता पर जोर देती है।षाड्गुण्य नीति में छह गुणों का उल्लेख है, जो समृद्ध और सुरक्षित समाज की नींव रखते हैं। पहला गुण, 'रक्षा' है, जो राष्ट्रीय सुरक्षा और रक्षा के लिए महत्त्वपूर्ण है। दूसरा गुण, 'संरक्षण' नीतियों के माध्यम से समाज की सुरक्षा और स्थिरता को सुनिश्चित करने के लिए जरूरी है। तीसरा गुण, 'आर्थिक समृद्धि', विभिन्न आर्थिक उपायों के माध्यम से समृद्धि की दिशा में महत्तवपूर्ण है। चौथा गुण, 'सामरिक सुरक्षा', जनता की सुरक्षा और संरक्षण को सामाहित करता है। पांचवा गुण,'समरसता', समाज में सभी वर्गों के बीच समानता और न्याय की स्थापना के लिए है। और आखिरी गुण, 'नीति', सुचारु नीतियों और निर्णयों के माध्यम से राष्ट्रीय सुरक्षा और समृद्धि को सुनिश्चित करने के लिए जरूरी है।षाड्गुण्य नीति ने समृद्धि, समानता, और सुरक्षा के महत्वपूर्ण पहलुओं को प्रोत्साहित किया है और उन्हें समाहित करने के लिए नीतियों और अनुशासन की महत्ता को जागरूक किया है। यह नीति समाज और राजनीति को स्थापित करते समय उपयोगी हो सकती है, ताकि एक समृद्ध, सुरक्षित और समान समाज की दिशा में कदम बढ़ाया जा सके।

शोध का उद्देश्य:

1. आचार्य कौटिल्य कृत अर्थशास्त्र में वर्णित षाड्गुण्य नीति का अध्ययन करना।
2. षाड्गुण्य नीति में बताये गये निर्देश का मूल्यांकन करना।
3. आचार्य कौटिल्य द्वारा प्रतिपादित षाड्गुण्य नीति का वर्तमान में उपयोगिता का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पना–राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय सम्बंधों के क्रियान्वयन में अर्थशास्त्र वर्णित षाड्गुण्य नीति वर्तमान समय में प्रासंगिक है।

शोध प्रविधि– प्रस्तुत शोध पत्र को तैयार करने में पुस्तकालय अनुसंधान विधि का प्रयोग करते हुए विभिन्न प्रबुद्ध लेखकों के ग्रंथ, पत्र-पत्रिकाओं, इंटरनेट स्रोतों आदि की सहायता ली गई है।

आचार्य कौटिल्य ने अन्तर्राष्ट्रीय एवं अन्तर्राज्य सम्बन्धों के संदर्भ में परराष्ट्र नीति अथवा सुरक्षा नीति के संचालन के लिए षाड्गुण्य नीति को आधार माना है।

एवंषड्भिर्गुणैरेतै: स्थित: प्रकृतिमण्डले।
पर्येषेत क्षयात स्थान, स्थानात् वृद्धिं च कर्मसु।।[1]

अर्थात राजा अपने प्रकृतिमण्डल में स्थित षाड्गुण-नीति द्वारा क्षीणता से स्थिरता तथा स्थिरता से वृद्धि की अवस्था में जाने की चेष्टा करे।[2] उन्होंने इस नीति के अन्तर्गत पुरातन छ: सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया, जो इस प्रकार हैं- सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और संश्रय। उनके अनुसार देश, काल एवं परिस्थिति के अनुरुप षाड्गुण्य नीति में परिवर्तन कर लेना चाहिए। सभी नीतियों का मुख्य उद्देश्य शत्रु की तुलना में अपने आप को शक्तिशाली बनाकर राज्य का विस्तार करना चाहिए। आचार्य कौटिल्य के षाड्गुण्य नीति का सविस्तार वर्णन इस प्रकार है-

1. **सन्धि-** यदि कोई निर्बल राजा किसी बलवान चक्रवर्ती राजा से घिर

जाए तो तुरन्त कोष, दण्ड (सेना), भूमि और अपने आपको यथावश्यक समर्पित करके सन्धि कर ले।[3] आचार्य कौटिल्य के अनुसार किसी भी राजा के द्वारा सन्धि करने का उद्देश्य शत्रु राज्य की शक्ति को नष्ट करके स्वयं को शक्तिशाली बनाना होता था। उनके अनुसार ऐसे शत्रु जिस पर विजय प्राप्त करना सम्भव न हो, सन्धि करके स्वयं को सबल बनाने के लिए कुछ समय प्राप्त कर लेना चाहिए।[4]

आचार्य कौटिल्य के अनुसार निम्नलिखित परिस्थितियों में सन्धि का आश्रय लेना चाहिए यदि विजिगीषु राजा सन्धि करने पर अपने बड़े-बड़े कार्य सम्पादित करने में तथा शत्रु के कार्यों में हानि पहुंचाने में समर्थ हो, अपने उत्तम कार्यों के साथ-साथ षत्रु के उत्तम कार्यों से भी लाभ उठा सकता हो। सन्धि के पष्चात शत्रु का विश्वासपात्र बनकर गुप्तचरों तथा विष-प्रयोगों से शत्रु का नाश कर सकता हो। शत्रु के मित्रों को अपना कृपापात्र बनाकर अपनी ओर आकृष्ट कर सकता हो। तो उसे सन्धि कर लेनी चाहिए।[5]

सन्धि के प्रकार- आचार्य कौटिल्य ने अनेक प्रकार के सन्धियों का विस्तृत वर्णन किया है। हीनबल राजा अपने सबल शत्रु से सन्धि करता है, तो उसे हीनबल सन्धि कहते हैं। यह सन्धि तीन प्रकार की होती है[6]-

(1) दण्डोपनत सन्धि (2) कोषोपनत सन्धि (3) देवोपनत सन्धि।

उपर्युक्त सन्धियों के अतिरिक्त भी कौटिल्य ने कुछ और सन्धियों का भी उल्लेख किया है।[7]

परिपणित देश सन्धि, परिपणित काल सन्धि,परिपणित कार्य सन्धि आदि।

2. विग्रह या युद्ध का समय- जब राजा देखे कि शत्रु विपत्ति में उलझ रहा है, उसकी प्रजाऐं सेना द्वारा पीड़ित हैं और राजा से विरक्त हो रही हैं, वे क्षीण हो चुकी हैं, निरुत्साहित हैं, आपस में लड़-झगड़ रही हैं और अब उन्हें लोभ द्वारा बस में किया जा सकता है, और जब वह देखे कि अग्नि, जल, व्याधि, महामारी आदि दैवी आपत्तियों द्वारा शत्रु के वीर पुरुष, वाहन आदि नष्ट हो चुके हैं और वह अपनी रक्षा करने में असमर्थ है- उसी समय राजा शत्रु से विग्रह करने के लिए निकल पड़े।[8]

विग्रह का अभिप्राय है- युद्ध। आचार्य कौटिल्य के मतानुसार विग्रह नीति का प्रयोग तभी करना चाहिए, जब शत्रु राजा निर्बल हो तथा विजिगीषु राजा की युद्ध व्यवस्थाऐं पूर्ण हों और वह अपनी शक्ति के विषय में पूर्णतया आश्वस्त हो। विग्रह करने से पूर्व ही राजा को राज्य मण्डल के मित्र राज्यों की सहायता प्राप्त कर लेनी चाहिए। आचार्य कौटिल्य के शब्दों में विजिगीषु राजा यह समझे कि मेरे देश में आयुध जीवी क्षत्रिय और कृषक अधिक हैं। मेरे देष में पहाड़, जंगल, नदी तथा किले बहुत हैं। मेरे राज्य में आने-जाने के लिए एक ही मार्ग है। शत्रु के किसी भी आक्रमण का प्रतिकार मेरा देश करने में समर्थ है या राज्य की सीमा पर अति दुर्भेध दुर्ग का आश्रय लेकर शत्रु के कार्यों का विनाशकाल अब समीप आ पहुंचा है अथवा विग्रह करते हुए शत्रु के जनपद को मैं किसी दूसरे रास्ते से पार कर लूंगा, तो विग्रह कर दे। ऐसी अवस्था में विग्रह करके ही वह अपनी उन्नति करे। दूसरी तरफ आचार्य कौटिल्य ने यह भी कहा है कि यदि विजिगीषु राजा सन्धि तथा विग्रह में समान लाभ देखे तो सन्धि का ही अवलम्बन लें, क्यों कि विग्रह करने में प्रजा, धन-धान्य आदि की बहुत क्षति होती है।[9]

आचार्य कौटिल्य ने विग्रह नीति का अनुसरण करने वाले राजा के लिए तीन शक्तियों से युक्त होना अनिवार्य माना है- उत्साहशक्ति, प्रभावशक्ति तथा मंत्र शक्ति। उत्साह शक्ति का अभिप्राय है- सफल युद्ध के लिए आवष्यक नैतिक बल, प्रभावशक्ति का अभिप्राय है- अस्त्र-शस्त्र आदि सामग्री तथा मंत्र शक्ति का अभिप्राय मंत्रणा तथा कूटनीति से है। उपर्युक्त तीनों शक्तियों में आचार्य कौटिल्य ने उत्साह शक्ति को प्रधानता दी है।[10]उन्होंने युद्ध के लिए संगठित और शक्तिशाली सैन्यबल का होना भी आवश्यक माना है।

युद्ध की परिस्थितियां- आचार्य कौटिल्य के अनुसार युद्ध से पूर्व विजिगीषु को निम्नलिखित परिस्थितियों पर अवश्य विचार कर लेना चाहिए-

राज्य की सभी प्रकृतियां स्वस्थ हों क्योंकि एक के भी व्यसन ग्रस्त होने से युद्ध में असफलता का सामना करना पड़ सकता है। युद्ध से पूर्व सैनिक शक्ति, भौतिक साधन, कूटनीति आदि सभी स्तरों पर शत्रु से श्रेष्ठ हों। युद्ध से पूर्व ही लाभ-हानि पर पूर्ण विचार-विमर्श कर लेना चाहिए तथा उसकी अनुपस्थिति में मंत्री, पुरोहित या युवराज द्वारा आन्तरिक विद्रोह करके राज्य को असुरक्षित न कर दिया जाये, इस विषय पर भी पूर्ण ध्यान देना चाहिए।[11]

आचार्य कौटिल्य ने युद्ध के प्रबन्ध का विस्तार से विवेचन किया है, उनके शब्दों में- सैनिकों के स्वास्थ्य संरक्षण और मनोविनोद के लिए चिकित्सक, काटने के औजार, चिमनी, दवाई, घी, तेल, मरहम-पट्टी, सह-चिकित्सक, खाने-पीने की साम्रग्री और सैनिकों को प्रसन्न करने वाली स्त्रियां, इन सब को युद्धभूमि के लिए प्रस्थान करते समय सेना के पिछले हिस्से में रखा जाये।[12] युद्ध के समय सेनापति सिपाही को उत्साहित करे। वह इस बात की घोषणा करे के जो सिपाही युद्ध में अपनी वीरता का परिचय देगा, उसे पुरस्कृत और सम्मानित किया जावेगा, उसको पदोन्नति दी जायेगी तथा उसका वेतन दोगुना कर दिया जायेगा।

युद्ध में प्राप्त भूमि पर विचार करते हुए आचार्य कौटिल्य ने लिखा है कि विजिगीषु जब शत्रु के राज्य को अपने अधीन कर ले तो उसे नये राज्य की प्रजा के लिए कल्याणकारी कार्य करने चाहिए। उसे प्रजा को ऋणदान और कर मुक्ति से प्रसन्न करना चाहिए। उसे अपने प्रजा जनों के समान ही शील, वेषभूषा और आचरण का व्यवहार करना चाहिए, प्रजा के विश्वासों की भांति, राष्ट्रदेवता, समाजोत्सव तथा विहारों में अपनी भक्ति भावना रखनी चाहिए।[13]

3. यान अथवा युद्ध के लिए प्रस्थान- किसी अन्याय-वृत्ति राजा की प्रजाओं में क्षय, लोभ तथा वैराग्य (असंतोष) फैलता है, जब वह राजा न करने योग्य कार्यों को करता हो और करने योग्य कार्यों का नाश कर देता हो, जब वह दण्डनीयों को दण्ड न देता हो और अदण्डनीयों को दण्ड देता हो, जब वह प्रधान पुरुष पर दोष लगाता हो, और मान्यों का अपमान करता हो। संक्षेप में जब वह राजा प्रमाद, आलस्य और योग-क्षेम (कल्याण) की हानि द्वारा प्रजाओं को उत्तेजित करता हो। वही समय उचित अवसर है, जबकि उस राजा के विरुद्ध यान अथवा युद्ध के लिए प्रस्थान कर देना चाहिए।[14]

यान का अभिप्राय है- वास्तविक आक्रमण। इस नीति को तभी अपनाना चाहिए जब विजिगीषु राजा अपनी स्थिति को सुदृढ़ देखे तथा उसे ऐसा प्रतीत हो कि आक्रमण के बिना शत्रु को वश में करना असम्भव हो। विग्रह तथा यान में केवल स्तर का ही भेद है। आचार्य कौटिल्य के अनुसार- यदि समझें कि शत्रु के कार्यों का नाश यान से सम्भव है तथा मैने अपने कर्मों की रक्षा का पूरा प्रबन्ध कर लिया है तो यान का आश्रय लेकर अपनी उन्नति करें।[15]

यान किस परिस्थिति में किया जाये इसका वर्णन करते हुए उन्होंने ने लिखा है कि- जब देखें कि शत्रु व्यसनों में फंसा हुआ है, उसका प्रकृति मण्डल के व्यसनों में उलझा है, अपनी सेनाओं से पीड़ित उसकी प्रजा उससे

विरक्त हो गई है, राजा स्वयं उत्साह हीन है, प्रकृति मण्डल में परस्पर कलह है, उसको लोभ देकर फोड़ा जा सकता है, शत्रु अग्नि, जल, व्याधि, संक्रामक रोग के कारण वह अपने वाहन, कर्मचारी, कोष आदि की रक्षा करनें में असमर्थ है तो ऐसी दशा में विग्रह करके चढ़ाई कर दें।[16]

4. आसन– जब राजा यह समझे कि मेरा शत्रु इतना समर्थ नहीं है कि मेरे कामों को हानि पहुंचा सके और न मैं उसके कामों को बिगाड़ सकता हूं, यद्यपि षत्रु राजा पर व्यसन है, परन्तु कलह में कुत्तो और शूकर की लड़ाई के तुल्य कोई फल न निकलेगा, अपना काम करते रहने पर मैं वृद्धि को प्राप्त करुंगा– तो इस परिस्थिति में राजा चुपचाप बैठा रहे और आसन नीति का अवलम्बन करे।[17]

आसन का अभिप्राय है– तटस्थता। आचार्य कौटिल्य के अनुसार अपनी वृद्धि के लिए समय की प्रतीक्षा करते हुए चुपचाप बैठे रहना ही आसन नीति है। राजा आसन नीति तभी अपनाता है जब वह स्वयं को शत्रु का नाश करने में असमर्थ समझता है तथा शत्रु भी इतना प्रबल नहीं होता कि उसका नाश कर सके।[18] आसन की नीति अपनाते हुए राजा के द्वारा शक्ति अर्जन की लगातार चेष्टा की जानी चाहिए। आचार्य कौटिल्य के अनुसार आसन के, स्थान तथा उपेक्षण दो नाम और भी हैं। चुपचाप बैठे रहना और किसी विषय में उपाय करते रहना स्थान है। अपनी वृद्धि के लिए चुपचाप बैठे रहना आसन कहलाता है। किसी उपाय का अवलम्बन न करना उपेक्षण कहलाता है।[19]आसन दो प्रकार के हैं– विग्रहय आसन तथा सन्धाय आसन।[20]

5. संश्रय– राजा का जो प्रिय हो अथवा दो में से जो अधिक प्रिय हो, राजा उसी का आश्रय ग्रहण करे।[21] संश्रय का अर्थ है– बलवान राजा की शरण लेना। यदि किसी राजा में शत्रु को क्षति पहुंचाने की क्षमता का तो अभाव हो ही, अपनी रक्षा करने में भी असमर्थ हो तो, उसे बलवान राजा की शरण लेना चाहिए। लेकिन इस बात पर अवश्य विचार कर लेना चाहिए कि जिसके षरण ली जा रही है, वह शत्रु से अधिक शक्तिशाली हो। आचार्य कौटिल्य के मतानुसार अगर दूसरा शक्तिशाली राजा न मिले तो, शत्रु का ही आश्रय ले लेना चाहिए।[22]

6. द्वैधीभाव– सन्धि के लिए किसी राजा द्वारा कहे जाने पर अथवा स्वयं किसी राजा के साथ सन्धि करने के लिए उद्यत होने पर, विजयेच्छुक राजा प्रथम सन्धि के तथा विग्रह के लाभ– हानि पर विचार करे और जैसा भी श्रेयस्कर प्रतीत होता हो, उसके अनुसार आचरण करे।[23]

द्वैधीभाव का अभिप्राय एक राजा से सन्धि तथा दूसरे से विग्रह करना है। जब कोई राजा किसी राजा से सन्धि करके उससे सेना तथा शस्त्रादि की सहायता लेकर शत्रु का नाश करता है, तो उसे द्वैधीभाव सन्धि कहते हैं। आचार्य कौटिल्य के मतानुसार द्वैधीभाव नीति के द्वारा शक्तिशाली राजा के साथ सन्धि व दुर्बल राजा के साथ विग्रह करना चाहिए। यदि संश्रय और द्वैधीभाव दोनों में समान लाभ हो तो द्वैधीभाव की नीति को ही अपनाना चाहिए, क्योंकि इससे राजा कार्यरत रहकर अपनी भलाई करता है।[24]

आचार्य कौटिल्य ने परराष्ट्र नीति के सफल क्रियान्वयन के लिए साम, दाम, भेद और दण्ड, इन चतुवर्ग उपायों के प्रयोग का विधान किया है।

कौटिल्य की षाड्गुण्य नीति का वर्तमान में उपयोगिता[25] –

कौटिल्य की षाड्गुण्य नीति राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा के क्षेत्र में बहुत महत्तवपूर्ण सिद्धांतों को संकेत करती है–

1. राष्ट्रीय सुरक्षा में उपयोगिता– षाड्गुण्य नीति राष्ट्रीय सुरक्षा में अपना महत्तवपूर्ण योगदान देती है। इस नीति के सिद्धांतों के अनुसार, राष्ट्रीय सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए सरकार को सशक्त और निर्णायक कदम उठाने चाहिए। यह सुरक्षा को बढ़ावा देता है जो आर्थिक, सामाजिक, और राजनीतिक सुरक्षा के रूप में व्यक्त हो सकता है।

2. संघर्ष और संरक्षण– यह नीति संघर्ष और संरक्षण के माध्यम से राष्ट्रीय सुरक्षा को समझाती है। सुरक्षा को बढ़ावा देने के लिए सरकार को आवश्यक रक्षा संरचना, सेना और प्रशासनिक उपायों का उपयोग करना चाहिए।

3. अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा में महत्तव– षाड्गुण्य नीति का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी महत्त्व है। इसने विदेशी नीतियों, संबंधों और अंतरराष्ट्रीय समझौतों में सुरक्षा को बढ़ावा देने के तरीकों को समझाया है।

4. संघर्ष के नियम– षाड्गुण्य नीति ने संघर्ष के नियमों को समझाया है और इसे राष्ट्रीय सुरक्षा में उपयोगी माना है। इसने युद्ध, शांति संधि और रक्षा के लिए विभिन्न रणनीतियों को सुझाव दिया है।

5. सामरिक सुरक्षा की बढ़ावा– नीति ने सामरिक सुरक्षा को भी महत्तव दिया है, जो एक राष्ट्रीय सुरक्षा के माध्यम से संचालित होती है और जिसमें लोगों की सुरक्षा और संरक्षण शामिल होता है।

इन सिद्धांतों का अनुसरण करके, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा में सुरक्षा और स्थिरता को सुनिश्चित किया जा सकता है। यह नीति सुरक्षा के विभिन्न पहलुओं को समझने और सुलझाने में मदद कर सकती है, जो राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सुरक्षा की गारंटी के रूप में काम करते हैं।

निष्कर्ष – कौटिल्य की षाड्गुण्य नीति राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा में महत्तवपूर्ण नीतियों को प्रस्तुत करती है। इस नीति के अनुसार, समृद्धि, समानता, और सामाजिक सुरक्षा को बढ़ावा देने के लिए सामाजिक न्याय और संरक्षण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। राष्ट्रीय सुरक्षा के मामले में, नीति ने शक्तिशाली संरचनाओं, सेना, और रक्षा प्रणालियों को सुझाव दिया है जो राष्ट्रीय हितों की रक्षा में मदद कर सकते हैं। यह नीति अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा के मामले में भी महत्तवपूर्ण है। विदेशी नीतियों, संबंधों, और समझौतों में सुरक्षा को बढ़ावा देने के तरीकों को समझाने के साथ–साथ, इसने अंतरराष्ट्रीय समूहों और संबंधों को मजबूत करने का भी सुझाव दिया है। आचार्य कौटिल्य वर्णित अर्थशास्त्र एक व्यवहारिक ग्रंथ है जिसमें विविध समस्याओं के समाधान हेतु शत्रु राज्य के विरुद्ध विजिगीषु राज्य को कई उपाय बताये हैं। आज विश्व की बड़ी महाशक्तियां जैसे अमेरिका, रुस, ब्रिटेन, चीन, फ्रांस इत्यादि के राजनीतिक, आर्थिक एवं सामरिक व्यवहार का सिंहावलोकन करने पर पता चलता है कि षाड्गुण्य नीति एवं साम, दाम, भेद व दण्ड की नीति का ही पालन किया जा रहा है।

ऐसे में आचार्य कौटिल्य के सैन्य चिंतन की प्रासंगिकता को नकारना अथवा विस्मृत करना बड़ी भूल होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सिंह, लल्लन जी, राष्ट्रीय रक्षा एवं सुरक्षा, 12वां संस्करण, पृ. 01
2. प्रो. इन्द्र, कौटिल्य अर्थशास्त्र, पृ. 108
3. वही, पृ. 109
4. कौटिल्यम् अर्थशास्त्रम्, 2/3
5. गैरोला, वाचस्पति –कौटिल्यम् अर्थशास्त्रम्, 7/1
6. वही
7. वही, 7/3
8. प्रो. इन्द्र, कौटिल्य अर्थशास्त्र, पृ. 111

9. गैरोला, वाचस्पति –कौटिल्यम् अर्थशास्त्रम्, 7/6
10. कौटिल्यम् अर्थशास्त्रम्, 7/1/2
11. कौटिल्यम् अर्थशास्त्रम्, 7/16
12. अग्रवाल, कमलेश –कौटिल्य अर्थशास्त्र एवं शुक्रनीति की राज्य व्यवस्थाऐं, पृ0 247
13. कौटिल्यम् अर्थशास्त्रम्, 10/3
14. प्रो. इन्द्र, कौटिल्य अर्थशास्त्र, पृ. 114–115
15. कौटिल्यम् अर्थशास्त्रम्, 13/5
16. कौटिल्यम् अर्थशास्त्रम्, 12/1
17. प्रो. इन्द्र, कौटिल्य अर्थशास्त्र, पृ. 111
18. वही
19. कौटिल्यम् अर्थशास्त्रम्, 7/1
20. कौटिल्यम् अर्थशास्त्रम्, 7/3
21. प्रो. इन्द्र, कौटिल्य अर्थशास्त्र, पृ. 116
22. प्रसाद, चन्द्रदेव– कौटिल्य, पृ016
23. प्रो. इन्द्र, कौटिल्य अर्थशास्त्र, पृ. 117
24. कौटिल्यम् अर्थशास्त्रम्, 7/2
25. www.historysaransh.com

****